Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.05, December, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

Knowledgeable Research
ISSN 2583-6633
Vol.02, No.05, December,2023
http://knowledgeableresearch.com/

"भक्ति की अवधारणा, स्वरूप व दार्शनिक पृष्ठभूमि "

सुजीत कुमार वर्मा
असिस्टेट प्रोफेसर (हिंदी विभाग)
एस० एस० कॉलेज, शाहजहांपुर
Email: sujeet771@gmail.com

****

सार : *भक्ति, ईश्वर की पूजा में निहित एक भावना है, जो वैदिक काल से प्रचलित है और समय के साथ विकसित हुई है। भक्ति शब्द, भज धातु से बना है जिसका अर्थ है सेवा करना, इसमें पूजा, प्रेम और भगवान को अर्पित करना शामिल है। भक्ति के दो मार्ग हैं: सगुण और निर्गुण, दूसरा ज्ञान का मार्ग और दूसरा प्रेम का मार्ग है। हिंदू धर्म भगवान के दोनों रूपों को स्वीकार करता है, संत और भक्त उनके पसंदीदा रूपों को अपनाते हैं। भक्ति पर दार्शनिक चर्चा मध्य युग में शुरू हुई, जिसमें शंकराचार्य जैसे विद्वान वेदों और उपनिषदों के माध्यम से हिंदू धर्म को मजबूत करने का प्रयास कर रहे थे। शंकराचार्य ने अद्वैतवाद का परिचय देते हुए तर्क दिया कि आत्मा और संसार का ब्रह्म के अलावा कोई वास्तविक महत्व नहीं है, और ज्ञान ही मन को शुद्ध करने का एकमात्र साधन है। रामानुजाचार्य ने शंकराचार्य के सिद्धांत का विरोध करते हुए कहा कि ब्रह्मा सर्वज्ञ, सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी है। निम्बार्काचार्य ने भी द्वैतवाद की स्थापना करते हुए कहा कि आत्मा और प्रकृति वस्तुगत रूप से वास्तविक हैं लेकिन ईश्वर पर निर्भर हैं.*

संकेत शब्द: *भक्ति, सगुण और निर्गुण, दार्शनिक चर्चा*

****

भक्ति एक भावना है, जिसका मूलाधार ईश्वर पूजा है। उसका प्रारम्भ वैदिक काल से प्रारम्भ होकर मध्य काल में परिणत हुआ। कविता भक्ति काल में साधन है साध्य नहीं। साध्य के रूप में तो भक्ति को ही मान्यता प्राप्त हुई। भक्ति शब्द के लिए कोषों में अनुराग, पूजा, आराधना और उपासना आदि शब्द दिये गये है, किन्तु इन सभी में थोड़ी - थोड़ी भिन्नता है। भक्ति शब्द की उत्पत्ति भज् धातु से हुई है जिसका अर्थ है सेवा करना किन्तु इसका अर्थ मात्र सेवा शब्द की सीमा में नहीं

Received Date: 21.12.2023
Publication Date: 30.12.2023

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.05, December, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

बांधा जा सकता है, क्योकि भक्ति में ईश्वर का भजन,पूजा,प्रीति और अर्पण भी शामिल है। नारद भक्ति सूल में भक्ति को परिभाषित करते कहा गया है कि "सा" तस्मिन परम प्रेम रूपा अमृत स्वरूप "च" अर्थात् वह भक्ति भगवान के प्रति परम प्रेम रूपा है, उसका स्वरूप अमृत के समान है। भगवत पुराण के अंतर्गत भक्ति के 9 साधन का उल्लेख मिलता है-श्रवण, कीर्तन, स्मरण, पादसेवन, वन्दना, दास्य,अर्चना,सख्य व आत्म निवेदन अथवा शरणागत। भक्ति के दो मार्ग है- सगुण व निर्गुण। सगुण भक्ति के दो भेद है- कृष्ण भक्ति धारा व राम भक्ति धारा। इसी तरह निर्गुण भक्ति के दो साधना पदति है- ज्ञान मार्ग व प्रेम मार्ग। हिन्दू धर्म में ईश्वर के निर्गुण और सगुण दोनों ही रूप मान्य है। सन्तो ने निर्गुण रूप को अपनाया। संत का अर्थ बुद्धिमान, पविलात्मा,परोपकारी, निवृत्ति मार्गी, सत्य पुरुष व सत्य मार्गी से है। भक्तो ने सगुण और निर्गुण दोनो रूप अपने सुविधा के अनुसार अपनाया। जो लोग राम- कृष्ण को विष्णु का अवतार मान कर आराधना करते थे वे वैष्णव कहलाये, इसी तरह शैव उपासक शिव को आराध्य मान कर पूजते है। शाक्त, कापालिक, बौद्ध,जैन-सिख आदि विविध सम्प्रदाय हिन्दू धर्म के प्रमुरूप अंग है। वास्तव में हिन्दू धर्म कोई न होकर जीवन दर्शन है। भक्ति के विषय में दर्शार्निक विवेचन का अपना महत्व है। इसका प्रारम्भ मध्य युग में हुआ। ईसा की पांचवी सदी पूर्व बौद्ध और जैन ने वैदिक धर्म की रुढिवाद्धिता के विरोध में एक आवाज उठायी, परिणाम स्वरूप दार्शनिक जगत में हलचल हुई और नई स्थापनाएं सामने आयी,धीरे-धीरे बौद्ध व जैन धर्म का पतन होने लगा। आठवी शताब्दी में शंकराचार्य ने वेदों और उपनिषदो के माध्यम से हिन्दू धर्म को नवीन शक्ति संचार करने का प्रयास किया। शंकराचार्य, रामानुजाचार्य, माध्वाचार्य, निम्वार्काचार्य,वल्ल्भाचार्य आदि जैसे विद्वान भक्ति के दार्शनिक विवेचन व विश्लेषण किया। यही दार्शनिक विवेचन ही मध्य युगीन भक्ति आन्दोलन की नींव का पथ्थर बनी। आठवी शताब्दी में शंकराचार्य ने अद्वैतवाद की स्थापना की। उपनिषद, भगवतगीता और ब्रहमसूत्र के भाष्यों के माध्यम से अद्वैतवाद को प्रस्तुत किया। शंकराचर्या का मानना है आत्मा और जगत का ब्रहम से अलग कोई यथार्थ महत्व नहीं है। यदि जीव और जगत में यथार्थ दिखाई देते है तो यह केवल भ्रम है। भ्रम को उन्होंने माया कहा है। उन्होंने ज्ञान को विशेष महत्त्व दिया। भक्ति और कर्म को केवल मन को शुद्ध करने का साधन कहा। रामानुजाचार्य ने विशिष्ट द्वैतवाद की स्थापना करके शंकराचर्या के सिद्धांत को तर्क पूर्ण शैली में मौलिक मान्यताओ के साथ विरोध किया। रामानुज ने शंकर की भांति ब्रहम को निर्गुण न मानकर उसे सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान और सर्वव्यापी माना। कर्मयोग, ज्ञान योग, और भक्ति योग में उन्होंने भक्ति योग को सर्वश्रेष्ठ माना।

Received Date: 21.12.2023
Publication Date: 30.12.2023

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.05, December, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

निम्बार्काचार्य ने द्वैताद्वैतवाद की स्थापना करके जीव,जगत और ईश्वर को अलग-अलग माना। आत्मा और प्रकृति वस्तुगत यथार्थ है, किन्तु दोनो में ईश्वर पर निर्भर है। ईश्वर एक मात्र स्वतंत्र सत्ता है। जीव और जगत ईश्वर से पूर्णतयः स्वतंत्र और असबंद है। द्वैतवाद की स्थापना आचार्य मध्वाचार्य ने किया। उनके अनुसार यह जगत यथार्थ है और जीवात्मा तथा परमात्मा के बीच भेद है। जीवात्मा ब्रह्मम और जगत ये शाश्वत यथार्थ है। तीनो का अलग अलग स्वतंत्र अस्तित्व व महत्व है। बल्लभाचार्य ने शुदाद्रैत की स्थापना करके अपनी मान्याओ के द्वारा ब्रहम अपने क्रिया गुणात्मक सारतत्व सत् चित और आनन्द को व्यक्त करता है। व्रह्मांड ब्रहम से उसी तरह प्रकट हुआ है जिस तरह अग्नि से चिन्गारी। वल्लभाचार्य ने गीता की मान्यता को प्रमाणित मानते हुए यह भी कहा कि भगवान श्री कृष्ण का अवतार धर्म की स्थापना के लिए हुआ। वल्लभाचार्य ने अपने भक्ति विषयक सिद्धांत को पुष्टि मार्ग की संज्ञा दी है। पुष्टि का अर्थ है भगवान के अनुग्रह से पोषण। पुष्टि भक्त अपने प्रयासों को छोड़ कर ईश्वर की कृपा पर निर्भर करता है। प्रभु के प्रति प्रेम भाव ही द्वैत को अदैत में बदल देता है। यही शुद्ध द्वैतवाद है। उन्होंने जीव तीन प्रकार के माने है- पुष्टि जीव, जो भगवान के अनुग्रह का ही भरोसा रखता है और नित्य लीला में प्रवेश पाते है। मर्यादा जीव, जो वेद की विधियों का अनुसरण करते है और स्वर्ग आदि लोक प्राप्त करते है। प्रवाह जीव, जो संसार के प्रवाह में पड़े सांसारिक सुखो की प्राप्ति में लगे रहते है। धर्म का प्रवाह कर्म, ज्ञान और भक्ति तीन धाराओ में चलता है। इन तीनो के सामजस्य से ही धर्म अपनी पूर्ण दशा में रहती है। किसी एक के अभाव से वह विकलांग रहता है। कर्म के बिना वह लूला लंगड़ा, ज्ञान के बिना अँधा और भक्ति के बिना ह्रदयविहीन निष्प्राण रहता है। भक्ति के द्वारा मनुष्य ईश्वर को प्राप्त करने के लिए साधना करता है। वह साधना किसी रूप या सम्प्रदाय में हो सकता है, चाहे वह सगुण मार्ग हो या निर्गुण मार्ग अपनाकर अपने आराध्य को पूजते है, वे सब हिन्दू धर्म की साधना पद्धति है। हिन्दू धर्म कोई धर्म न होकर यह जीवन दर्शन है। विभिन्न पंथ अपने-अपने सिद्धांत के अनुसार ईश्वर की पूजा करते है। आत्मा और परमात्मा के मिलाने का साधन है भक्ति। भक्ति जिसका सूत्रपात्र्र महाभारत काल में, विस्तृत प्रवर्तन पुराण में हुआ था, कही कभी दबती कभी कही उभरती किसी प्रकार चली आ रही थी। डा० सतेन्द्र ने कहा है- "भक्ति द्रविण में उपजी लाये रामानन्द प्रकट करी कबीर ने सप्तदीप नव खण्ड" भक्ति आन्दोलन एक आकस्मिक घटना नहीं था क्यूंकि इसका पृष्ठिभूमि कई शताब्दियों से तैयार हो रही थी। मध्य काल में अनुकूल परिस्थतियां पाकर व्यापक जन आन्दोलन के रूप में फूट पड़ा।

सुजीत कुमार वर्मा
Received Date: 21.12.2023
Publication Date: 30.12.2023

Knowledgeable Research *ISSN 2583-6633* Vol.02, No.05, December, 2023
An International Peer-Reviewed Multidisciplinary Journal

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची:

डा० बच्चन सिंह हिंदी साहित्य का दूसरा इतिहास, पेज 75 से 78

डा० नगेन्द्र - हिंदी साहित्य का इतिहास, पेज 94 से 168

राम चन्द्र शुक्ल - हिंदी साहित्य का इतिहास, पेज 39 से 104

बाबु गुलाब राय दृ हिंदी साहित्य का सुबोध इतिहास, पेज 24 से 26

सुजीत कुमार वर्मा
Received Date: 21.12.2023
Publication Date: 30.12.2023